Journal Homepage: - www.journalijar.com
INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH (IJAR)
Article DOI: 10.21474/IJAR01/20856
DOI URL: http://dx.doi.org/10.21474/IJAR01/20856

RESEARCH ARTICLE

राजर्षि पुरुषोत्तम दास टण्डन की हिन्दी सेवा

*रजनीश कुमार
स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग, तिलका मा ँ ंझी भागलपुर विश्वविद्यालय, भागलपुर.

Manuscript Info

Manuscript History
Received: 17 February 2025
Final Accepted: 21 March 2025
Published: April 2025

Key words:-
हिन्दी, देवनागरी, राष्ट्रभाषा, राजभाषा, राजर्षि पुरुषोत्तम दास टण्डन, हिन्दी आन्दोलन, अंग्रेज़ी।

Abstract

हिन्दी भाषा आन्दोलन में महात्मा गाँधी, पंडित मदन मोहन मालवीय, सेठ गोविन्द दास, राजर्षि पुरुषोत्तम दास टण्डन, डॉ. राममनोहर लोहिया जैसे बड़े-बड़े नेताओं ने अपना योगदान दिया। इन सभी में से राजर्षि टण्डन का हिन्दी भाषा और साहित्य को दिया गया योगदान महत्त्वपूर्ण है। इन्होंने सड़क से लेकर संसद तक हिन्दी भाषा को राष्ट्रभाषा और राजभाषा का दर्जा दिलाने के लिए संघर्ष किया। हिन्दी साहित्य सम्मेलन से आजीवन जुड़े रह कर इन्होंने जो काम किया वह किसी एक संस्था से कम नहीं है। राजर्षि टण्डन हिन्दी के प्रबल समर्थक थे। यही कारण है कि हिन्दी और हिन्दुस्तानी के सवाल पर इन्होंने गाँधी जैसे बड़े नेता के साथ अपनी स्पष्ट असहमति जताई और हिन्दी भाषा के साथ खड़े हुए। हिन्दी को राजभाषा बनाने के पीछे भी इनका योगदान उल्लेखनीय है।.

"© 2025 by the Author(s). Published by IJAR under CC BY 4.0. Unrestricted use allowed with credit to the author."

हिन्दी भाषा और देवनागरी लिपि के सन्दर्भ में भारत में हुए व्यापक आन्दोलन का परिप्रेक्ष्य प्रसिद्ध है। स्वतंत्रता-प्राप्ति के पहले से ही शुरू हुए इस आन्दोलन ने एक लम्बा रास्ता तय किया और यूँ कहिए कि यह आन्दोलन आज भी किसी-न-किसी रूप में जारी है । स्वतंत्रता आन्दोलन के समय से ही चले इस आन्दोलन में विद्यार्थीयों, साहित्यकारों, लोकप्रिय नेताओं और यहाँ तक कि सामान्य जनों तक ने अपनी श्रद्धा इस आन्दोलन को लेकर दिखाई। यह आन्दोलन ब्रिटिश सत्ता के दमनकारी शासन के दौर में भी चला और उसके बाद भी। इस आन्दोलन ने बहुआयामी विरोधों और विरोधियों का सामना किया। यही कारण है कि हिन्दी के लिए चलाए गए इस संघर्ष ने एक व्यापक विमर्श का रूप ले लिया। इसने स्वतंत्र भारत में भारत की भाषा-समस्या के रूप में एक नया प्रसंग सभी के समक्ष लाया। भारत की इस भाषा-समस्या ने धीरे-धीरे एक बड़े विवाद का रूप धारण कर लिया। भाषा की समस्या सुलगी हुई आग की तरह है जो समय-समय पर हल्के झोंके के बाद चिंगारी के रूप में जल उठती है और इस प्रकार एक नया हंगामा खड़ा हो जाता है। इसके उदाहरण आज़ादी के बाद के भारत में देखे जा चुके हैं। इसके अपने व्यक्तिगत, राष्ट्रगत और राजनीतिक खतरे हैं।

हिन्दी भाषा और देवनागरी को उसका उचित स्थान और सम्मान दिलाने के लिए आरम्भ से ही कई लोगों ने अपना योगदान दिया। हिन्दी भाषा और देवनागरी लिपि के समर्थक के रूप में सितारे हिन्द, भारतेंदु, गाँधी, महावीर प्रसाद द्विवेदी, बालकृष्ण भट्ट, मदनमोहन मालवीय, राममनोहर लोहिया, सेठ गोविन्द दास और राजर्षि पुरुषोत्तम दास टण्डन के अलावा अन्य कई व्यक्तियों के नाम महत्त्वपूर्ण हैं। इनमें से कुछ महानुभाव तो ऐसे भी हैं जिन्होंने अपनी पूरी ज़िन्दगी हिन्दी और नागरी की सेवा को ही सौंप दी। हिन्दी और नागरी के लिए आगे आए इन सभी लोगों की चिंता इस बात को लेकर थी कि हिन्दी इस देश में अधिकांशतः बोली और समझी जाती है और इस प्रकार इस भाषा को राष्ट्रभाषा के रूप में स्थापित होना चाहिए और इसके साथ ही भारत देश उस भाषा के नाम से जाना जाए और इसके साथ ही उसी भाषा में इस देश का शैक्षणिक, सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक व्यवहार सम्पन्न हों। इसके पीछे इन हिन्दी प्रेमियों और समर्थकों का एक तर्क यह भी था कि अंग्रेज़ी जो कि ब्रिटिश उपनिवेश की भाषा है, इस भाषा का यहाँ के परिवेश में कोई भी दबदबा न हो। इन हिन्दी के समर्थकों ने अंग्रेज़ी भाषा में अन्तर्निहित सामंतवाद, वर्गीय-श्रेष्ठता और भेदभाव के चरित्र को भी इंगित करने का काम किया। इनका यह भी तर्क था कि राजनीतिक गुलामी से आज़ादी का मतलब यह भी होना चाहिए कि सांस्कृतिक गुलामी से भी देश को आज़ादी मिले। अंग्रेज़ी के प्रयोग में कई भाषाविदों ने इस चरित्र को रेखांकित करने का काम

Corresponding Author:- रजनीश कुमार.
Address:- **स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग, तिलकामांझी भागलपर विश्वविद्यालय, भागलपर.**

किया। इन्होंने कहा कि उपनिवेशी सत्ता की गुलामी से आज़ाद हुए इस देश के नागरिक अपने देश और क्षेत्र की भाषा/बोली में चिंतन और कार्य करें, जिसमें अधिक उत्पादकता और उपयोगिता की संभावना है।

हिन्दी के समर्थकों ने एक स्वर से हिन्दी के समर्थन और इसके उपयोग में नानाविध तर्कों को सभी के सामने रखा और लोगों को यह यकीन दिलाया कि इस देश का भला इसी में है कि हिन्दी यहाँ की व्यावहारिक भाषा के रूप में स्थापित हो। हिन्दी के प्रबल समर्थक सेठ गोविन्ददास के भाषण का यह अंश उल्लेखनीय है जिसे इन्होंने भारतीय विधान मंडल में सदस्यों के हिन्दी और उर्दू में भाषण करने की अनुमति के संबंध में अपनी सिफारिश रखते हुए कहते हैं कि **"मेरी दृष्टि में राजनीतिक स्वराज्य, जो जो इस देश की सभ्यता, कला, संस्कृति व भाषा से रहित हो, निरर्थक है। स्वाभाविक रूप से एक देश के विधान मण्डल की कार्रवाई उसी भाषा में चलनी चाहिए, जो वहाँ की जनता बोलती हो।"**[1] सेठ गोविन्द दास के अलावा संविधान सभा के एक अन्य सदस्य जिन्होंने न सिर्फ संविधान सभा के भीतर हिन्दी के समर्थन में ज़ोरदार और प्रभावी आवाज़ उठाई बल्कि सभा के बाहर भी इन्होंने हिन्दी और नागरी की सेवा के लिए अपना सम्पूर्ण जीवन समर्पित कर दिया। राजर्षि पुरुषोत्तम दास टण्डन का नाम हिन्दी-सेवियों की श्रेणी में सबसे अधिक सम्मान के साथ लिया जाता है। इन्होंने कई स्तरों पर हिन्दी और देवनागरी के विकास और इसके सम्मान के लिए कार्य किया।

हिन्दी भाषा और देवनागरी के आन्दोलन को टण्डन जी ने आगे बढ़ाने का काम किया, जिसे शुरुआत में सितारे हिन्दी और पंडित मदन मोहन मालवीय जैसे लोगों ने शुरू किया था। राजर्षि टण्डन की हिन्दी सेवा का सबसे जीवंत उदाहरण 'हिन्दी साहित्य सम्मेलन' है। राजर्षि टण्डन उनलोगों में गिने जाते हैं जिन्होंने न सिर्फ सड़कों पर, न सिर्फ संस्थाओं में बल्कि संसद के भीतर भी इसके लिए संघर्ष किया। बचपन में ही अपनी स्कूली शिक्षा के दौरान इनका लगाव हिन्दी भाषा और साहित्य को लेकर हो गया था। इनके विद्यार्थी जीवन पर पंडित मदनमोहन मालवीय और हिन्दी साहित्य के लब्धप्रतिष्ठ साहित्यकार और सम्पादक बालकृष्ण भट्ट का अत्यधिक प्रभाव देखने को मिलता है। बालकृष्ण भट्ट द्वारा सम्पादित पत्रिका 'हिन्दी प्रदीप' में राजर्षि टण्डन लेख लिखा करते थे। इसके बाद से इनका हिन्दी-प्रेम रुका नहीं। ये निरंतर हिन्दी भाषा और साहित्य का अध्ययन करते रहे और पंडित मदन मोहन मालवीय एवं अन्य साहित्यकारों के संसर्ग में रहते हुए हिन्दी आन्दोलन से भी जुड़ते चले गए। इसके बाद तो इन्होंने हिन्दी और नागरी की इतनी सेवा की कि हिन्दी समाज आज भी इनको सम्मान की दृष्टि से देखता है। हिन्दी की सेवा के भाव को स्वयं टण्डन जी ने अपने शब्दों में स्पष्ट करते हुआ कहा है कि **"हिन्दी की सेवा का भाव मेरे श्वास-श्वास में रमा है। मैं हिन्दी का और हिन्दी मेरी है। हिन्दी के लिए मेरे प्राण भी प्रस्तुत हैं। ...भाषा का महत्त्व अभी हम लोगों ने समझा नहीं है। भाषा ही राष्ट्र का जीवन है। भाषा को ही लेकर विदेशों में राष्ट्रीय आन्दोलन खड़े हुए हैं। ...हमें भी देश के जीवन के लिए सारे भारतवर्ष में एक राष्ट्रीय भाषा हिन्दी का प्रचार करना है।"**[2] इस प्रकार, हिन्दी-सेवा को लेकर इनके द्वारा किए गए त्याग और कार्य को बखूबी समझा जा सकता है।

हिन्दी भाषा और नागरी लिपि को लेकर राजर्षि पुरुषोत्तम दास टण्डन के द्वारा किए गए कार्य अत्यंत ही व्यापक हैं। हिन्दी-सेवा के क्षेत्र में इन्होंने कई मोर्चों और मंचों से काम किया और उन सभी जिम्मेवारियों का निर्वहन हमेशा ईमानदारी, निष्ठा और गंभीरता के साथ किया। राजर्षि टण्डन हमारे सामने एक प्रचारक, सम्पादक, पत्रकार, संस्था के जिम्मेवार पदाधिकारी और कार्यकर्ता, राजनेता और स्वतंत्रता-सेनानी आदि के रूप में अपने जीवन में आते हैं और इन सभी पदों और जिम्मेवारियों को ये गंभीरतापूर्वक निभाते हैं। हिन्दी-सेवा के क्षेत्र में राजर्षि टण्डन की शुरुआत बतौर पत्रिका के सम्पादक से होती है। **"सन 1909 ई. में टण्डन जी 'अभ्युदय' के संपादक हुए और हिन्दी-पत्रकारिता का भी कार्य किया। लाला लाजपत राय द्वारा स्थापित लोक सेवा मण्डल के सदस्य बन कर आपने सेवा को ही जीवन का मुख्य लक्ष्य बनाया।"**[3] यह वह समय था जब हिन्दी भाषा और देवनागरी लिपि के प्रचार-प्रसार और विकास के कार्यों में पत्र-पत्रिकाओं और सम्पादकों की भूमिका उल्लेखनीय थी। इस समय हिन्दी-सेवा और उसके प्रचार-प्रसार के कार्य में लगे कई लोग पत्र-पत्रिकाओं से किसी-न-किसी रूप से जुड़े हुए थे। मदनमोहन मालवीय ने भी कई पत्रिकाओं के सम्पादक के रूप में कार्य किया था।

राजभाषा और राष्ट्रभाषा के सन्दर्भ में राजर्षि पुरुषोत्तम दास टण्डन के विचार और कार्य

ब्रिटिश परतंत्रता के समय से ही हिन्दी-आन्दोलन की शुरुआत हो जाती है। आरम्भ में इस आन्दोलन का लक्ष्य हिन्दी को उत्तर प्रदेश प्रान्त के अदालती कार्यों में उर्दू-फारसी के समकक्ष स्थान दिलाने का था और बाद में आगे चल कर इस आन्दोलन ने व्यापक रूप लिया। हिन्दी को अंग्रेज़ी के बरक्स राजभाषा और स्वतंत्र राष्ट्र की राष्ट्रभाषा के रूप में स्थान दिलाने के लिए आन्दोलन किया गया। राजर्षि टण्डन भी हिन्दी को राष्ट्रभाषा और राजभाषा के पद पर आसीन होते देखना चाहते थे। उनकी यह मान्यता अत्यंत ही दृढ थी और वे इसी दृढ इच्छाशक्ति के साथ राष्ट्रभाषा और राजभाषा के प्रचार में लगे हुए थे।

राजर्षि पुरुषोत्तम दास टण्डन शुरुआत से ही इस विचार के साथ खड़े थे कि हिन्दी भाषा को ही इस देश की राष्ट्रभाषा और राजभाषा के रूप में सुशोभित होना चाहिए और इसके साथ ही देवनागरी लिपि और उसके अंकों के राष्ट्रीय रूप को आधिकारिक रूप से घोषित किया जाय। संविधान सभा के सदस्य के रूप में भी इन्होंने हिन्दी के पक्ष में मजबूती के साथ अपना पक्ष रखा। इन्होंने संविधान सभा के भीतर हिन्दी भाषा और देवनागरी के विरोध में उठने वाले तर्कों का भी वैज्ञानिक तरीके से जवाब दिया। **"राजर्षि टण्डन जी के प्रभाव का ही फल था कि भारतीय संविधान ने हिन्दी को केंद्रीय शासन की और राज्यों के परस्पर व्यवहार की भाषा स्वीकार किया और घोषित किया कि भारत की राजभाषा हिन्दी होगी"**[4] संविधान सभा के भीतर भाषा की समस्या को लेकर हुई बहसों को देखने के बाद यह स्पष्ट रूप से समझा जा सकता है कि हिन्दी की राजभाषा के रूप में स्वीकृति इतनी आसान नहीं रही। राजर्षि टण्डन इस बात के भी खिलाफ थे कि अगले 15 वर्षों तक सरकारी काम-काज के लिए अंग्रेज़ी भाषा प्रयोग में लाई जाय। राजर्षि टण्डन इसके आगामी प्रभावों और परिणामों को समझ पा रहे थे। इनकी शंका सही थी जो आगे चल कर सच भी साबित हुई। इस सन्दर्भ में श्री विद्याभास्कर इस बात का उल्लेख करते हैं कि **"यदि टण्डन जी तनिक शिथिल न होते तो हिन्दीकरण की तिथि 15 वर्ष की न रखी गयी होती। स्नेही साथियों का आग्रह मान कर उन्होंने 15 वर्ष की अवधि मान ली थी। किन्तु वह**

जानते थे कि 15 वर्ष की समाप्ति के समय उन्हें पुनः उसके लिए संघर्ष करना पड़ेगा।"[5] गौरतलब है कि इन्होंने इस तर्क के खिलाफ भी अपना विरोध प्रकट किया था कि अगले 15 वर्षों तक उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों की कार्यवाही अंग्रेज़ी में की जाएगी। यहाँ टण्डन जी ने सुझाया कि उच्चतम न्यायालय में सारे काम ज़रूर अंग्रेज़ी में हों लेकिन सभी उच्च न्यायालयों में अंग्रेज़ी में काम होना आवश्यक नहीं है। हिन्दी प्रदेश के न्यायालयों में सारे काम हिन्दी में किया जा सकता है। यहाँ फिर ये हिन्दी प्रदेश के कुछ ऐसे न्यायालयों का उदाहरण भी सभी के सामने रखते हैं जहाँ पहले से व्यवहार में हिन्दी भाषा का प्रयोग चल रहा है।

इस प्रकार, हिन्दी को राष्ट्रभाषा और राजभाषा बनाने के पीछे राजर्षि टण्डन ने जितना प्रयास हो सकता था किया लेकिन हिन्दी विरोधियों की गुटबंदी के कारण ये और अन्य हिन्दी समर्थक इसमें सफल नहीं हो पाए।

हिन्दी साहित्य सम्मेलन और राजर्षि पुरुषोत्तम दास टण्डन

हमारे सामने जैसे ही हिन्दी साहित्य सम्मेलन का नाम आता है तो स्वभावतः ही एक चेहरा सामने आता है और फिर श्री रामप्रताप त्रिपाठी की यह बात हमें शत प्रतिशत सही लगती है कि **"जिस प्रकार कांग्रेस के साथ महात्मा गाँधी का, हिन्दू विश्वविद्यालय के साथ महामना मालवीय का, उसी प्रकार हिन्दी साहित्य सम्मेलन के साथ टण्डन जी का नाम भी अभेद्य, अछेद्य और अविभाज्य है।"**[6] निर्विवाद रूप से राजर्षि पुरुषोत्तम दास टण्डन 'सम्मेलन के प्राण' माने जाते थे। संस्था की स्थापना की शुरुआत से ही इन्हें इसके संचालन की जिम्मेवारी सौंपी दी गई और धीरे-धीरे ऐसा समय आया है जब राजर्षि टण्डन का नाम इस संस्था का पर्याय बन गया। इन्होंने लगातार 10 वर्षों तक सम्मेलन के प्रधानमंत्री का पद संभाला और हिन्दी भाषा, साहित्य एवं देवनागरी के विकास के लिए कई महत्त्वपूर्ण कार्य किए। इन्होंने इस सम्मेलन को किस रूप में और किन परिस्थितियों में चलाया यह जानना अत्यंत ही रोचक है। श्री रामप्रताप त्रिपाठी इस सन्दर्भ में लिखते हैं कि **"अपने प्रधानमंत्रित्व के 10 वर्षों में सम्मेलन को आगे बढ़ाने में टण्डन जी ने वही काम किया जो स्नेहमय तथा महत्त्वाकांक्षी पिता अपने इकलौते बेटे के सर्वतोमुखी उत्कर्ष एवं कल्याण के लिए निजी सुख-दुःख भूल कर किया करता है। उस समय सम्मेलन के पास धन-सम्पत्ति तो दूर कार्यालय के लिए छोटी-सी कोठरी भी नहीं थी और जैसा कि पहले कहा जा चुका है, आरम्भ के कई वर्षों तक टण्डन जी का निजी कमरा ही सम्मेलन का कार्यालय था और उनके निजी मुंशी ही सम्मेलन का बहुत-कुछ काम किया करते थे। शेष कामकाज या तो टण्डन जी स्वयं करते थे अथवा अपने पास से ही वेतनादी देकर आंशिक समय के कार्यकर्ताओं द्वारा करते थे। परीक्षाओं के शुल्क और पुस्तकों के प्रकाशनों द्वारा अब सम्मेलन को थोड़ी-बहुत आय होने लगी, तब भी सम्मेलन का अनावश्यक एक पैसे का व्यय टण्डन जी कभी नहीं करते थे।"**[7] इसी सम्मेलन का हिस्सा रहते हुए इनके सामने हिन्दी और हिन्दुस्तानी का विवाद सामने आया। गाँधी हिन्दुस्तानी के प्रबल समर्थक थे। इनके अलावा डॉ. राजेंद्र प्रसाद, विनोबा भावे, काका कालेलकर तथा अन्य कई नेताओं द्वारा राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दुस्तानी का समर्थन था जबकि टण्डन जी के अलावा साहित्य सम्मेलन के अधिकांश सदस्य हिन्दुस्तानी और फारसी लिपि को साथ लेकर चलने के पक्ष में नहीं थे। टण्डन जी समेत अन्य कई हिन्दी समर्थकों को हिन्दुस्तानी नाम से आपत्ति नहीं थी पर वे फारसी लिपि के प्रयोग को मानने के लिए तैयार नहीं थे। हिन्दी को लेकर राजर्षि टण्डन अडिग हो गए। गाँधी राजर्षि टण्डन को लिखे पत्र में स्पष्ट रूप से कहते हैं कि अगर सम्मेलन राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दुस्तानी का समर्थन नहीं करता है तो उन्हें सम्मेलन छोड़ना पड़ेगा। टण्डन जी ने इस समझौते को नहीं माना और अंततः, गाँधी जी का इस्तीफ़ा इन्होंने स्वीकार कर लिया।

इस प्रकार, उपर्युक्त सन्दर्भ इस बात को बतलाता है कि राजर्षि पुरुषोत्तम दास टण्डन का हिन्दी के प्रति लगाव और समर्थन किस स्तर का था। हिन्दी साहित्य सम्मेलन का नेतृत्व करते हुए टण्डन जी ने हिन्दी भाषा और साहित्य की वृद्धि और इसके विकास के लिए कई सारे उपक्रम किए, जिनमें पुस्तकों का प्रकाशन, शब्दकोषों का सम्पादन आदि के साथ-साथ पांडुलिपियों की खोज आदि भी शामिल हैं। ये आजीवन हिन्दी के विकास को लेकर चिंतित और प्रतिबद्ध रहे। इस बात में कोई दो राय नहीं है कि हिन्दी जगत इनके त्याग और योगदान को लेकर ऋणी है।

हिन्दी भाषा और साहित्य को योगदान देने के सन्दर्भ में राजर्षि टण्डन का योगदान अन्य हिन्दी सेवियों की तुलना में भिन्न है। इनकी हिन्दी-सेवा में हमें भावुकता, गंभीरता और समर्पण, त्याग और मजबूत इच्छाशक्ति की भावना देखने को मिलती है। इनकी हिन्दी-सेवा के प्रति त्याग, समर्पण और जिजीविषा को बड़े-बड़े भाषाविदों नेताओं और साहित्यकारों ने सराहा है।

सन्दर्भ सूची

1. दास, सेठ गोविन्द, राज-भाषा हिन्दी, प्रयाग, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, 1965, पृष्ठ 1
2. टण्डन, पुरुषोत्तम दास, भारत रत्न राजर्षि पुरुषोत्तम दास टण्डन : व्यक्तित्व एवं संस्मरण, सम्पादक लक्ष्मी नारायण और ओंकार शरद, इलाहाबाद, ज्योत्स्ना प्रकाशन, 1967, पृष्ठ 31 से उद्धृत
3. सोनी, सत, राजर्षि पुरुषोत्तम दास टण्डन, दिल्ली, प्रकाशन विभाग, 1995, पृष्ठ 29 से उद्धृत
4. श्री विद्याभास्कर, ऐसा निर्भिक नेता कहाँ है? सम्मेलन पत्रिका (गाँधी-टण्डन-स्मृति-अंक), भाग 55, संख्या 3, सम्पादक ज्योतिप्रसाद मिश्र 'निर्मल' और रामप्रताप त्रिपाठी शास्त्री, प्रयाग, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, 2002, पृष्ठ 313
5. वही
6. त्रिपाठी, श्री रामप्रताप, हिन्दी साहित्य सम्मेलन और राजर्षि टण्डन जी, सम्मेलन पत्रिका (गाँधी-टण्डन-स्मृति-अंक), भाग 55, संख्या 3, सम्पादक ज्योतिप्रसाद मिश्र 'निर्मल' और रामप्रताप त्रिपाठी शास्त्री, प्रयाग, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, 2002, पृष्ठ 225

वही, पृष्ठ 233